मानवाधिकार की अवधारणा : वर्तमान परिदृश्य एवं भविष्य की चुनौतिया

विशाखा,

वाई05–108, गंगा यमुना हिन्डन अपार्टमेंटस,
सिद्धार्थ विहार,
गाजियाबाद,उ.प्र.

शोध सारांश

पारंपरिक दृष्टि से मानव के प्राकृतिक अधिकारों को व्यक्तिगत अधिकारों के रूप में परिभाषित किया जाता है, चाहे वह पूर्व सामाजिक ऐतिहासिक परिस्थिति के संदर्भ में हो अथवा पूर्व सामाजिक कल्पनात्मक अवधारणा के अनुरूप हो। मानव के अधिकारों की पहचान समुदाय अथवा समाज की प्रकृति के अनुरूप होती है न कि एक व्यक्ति की तुलना में दूसरे व्यक्ति के संदर्भ में। मानव अधिकारों की अवधारणा का विकास उन अधिकारों के संदर्भ में हुआ है, जो किसी समाज अथवा समुदाय में सकारात्मक अथवा नकारात्मक रूप में आवश्यक होते हैं। मानव अधिकारों का विश्लेषण व्यक्ति को केन्द्र में रखकर ही किया जा सकता है: ये मौलिक आवश्यकताएँ किसी समुदाय में व्यक्तिगत विकास के लिए अपरिहार्य होती हैं, जहाँ समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति अपने आप में पृथक अस्तित्व वाले और विशिष्ट महत्त्व लिए हुए होते हैं। परन्तु व्यक्तिगत हित के साथ सामूहिक हित भी जुडा होता है, ऐसी स्थिति में मानवाधिकारों का स्वरूप परिवर्त्तित हो जाता है और मानवाधिकारों की पहचान कर पाना विवादास्पद हो जाता है। इस स्थिति में मानव अधिकारों की पहचान नैतिक अधिकारों के रूप में की जा सकती हैं, जो प्रत्येक स्त्री और पुरूष के लिए व्यक्तिगत और सामूहिक हित के लिए एक मानव मात्र के रूप में प्राप्त होने चाहिए।

Keywords : *मानवाधिकार, अवधारणा, प्राकृतिक कानून, राजनीतिक,चुनौतियाँ।*

किसी भी समाज की अवधारणा उसके आपसी सामन्जस्य पर निर्भर करती है। इस व्यवस्था के सुचारू रूप से क्रियान्वयन हेतु समाज में कुछ विधानों का संचालन सामाजिक स्वीकृति के आधार पर होता है। व्यवस्था अव्यवस्था में परिवर्तित न हो सके इसके लिए बहुत ही आवश्यक है कि समाज के सभी अंगों को समान रूप से कार्य करने दिया जाये और इस समानता में उनको कार्य करने के विशेषाधिकार भी प्रदान किये जायें। मानव को अपनी कार्यक्षमता को विकसित करने और अपने अस्तित्व के साथ–साथ व्यक्तित्व विकास के लिए कुछ अधिकारों से सम्पन्न किया गया है। इन अधिकारों को किसी विशेष व्यवस्था अथवा शासनादेश के माध्यम से प्रदत्त नहीं किया जाता वरन् ऐसा विचार किया गया कि जब मानव ने इस पृथ्वी पर जन्म लिया तो उसको कुछ अधिकार जन्मतः ही प्राप्त हो जाते हैं। इन्हीं अधिकारों को हम मूलतः मानव अधिकारों के नाम से जानते और स्वीकारते हैं।

प्रकृति के प्रादुर्भाव से और इसके बाद मानवीय सभ्यता के जन्म से ही समाज में मानव जाति ने सदैव अपनी विकास की अवस्था को प्राप्त करते हुए अपनी नैसर्गिक आवश्यकताओं, सुविधाओं, स्वतन्त्रताओं, मूल्यों के प्रति अपनी

जागरूकता को बनाये रखा है। इस जागरूकता में ही उसने अपने लिए कतिपय अधिकारों का निर्माण कर उन्हें सामाजिक स्तर पर मान्यता प्रदान की। अधिकारों को सामाजिक मान्यता की आवश्यकता इस कारण से भी अधिक महसूस होती है क्योंकि सामान्य रूप में अधिकार वे दावे हैं जिन्हें समाज और राज्य मान्यता देने के साथ–साथ लागू करता है। दोनों संस्थाओं के लिए यह देखना आवश्यक हो जाता है कि मानव के द्वारा बनाये जाने वाले अधिकार किसी भी रूप में समाज के लिए अथवा राज्य के लिए घातक तो नहीं हैं। समाज द्वारा अस्वीकृत होने वाले अधिकारों को मानव के लिए मान्य नहीं हैं और न ही वे मानव को प्रदान किये जाते हैं।

यद्यपि मानव अधिकारों की अवधारणा बीसवीं सदी में विचार–विमर्श का प्रमुख बिन्दु बनी लेकिन इसके सूत्र–प्राचीन व पारंपरिक कृतियों में देखे जा सकते हैं। प्राच्य भारतीय दार्शनिकों जैसे मनु, पाराशर व कौटिल्य ने मानव की स्वार्थमय व लोभकारी प्रवृत्तियों से उसके सम्मान व अधिकार की रक्षा का प्रयास अपने विचारों में किया है। इस भारतीय दार्शनिकों ने नागरिकों के सम्मान की रक्षा हेतु शासकों के लिए तमाम कर्तव्यों का निर्धारण किया। पाश्चात्य दार्शनिकों में सर्वप्रथम प्लेटों के न्याय सिद्धान्त में नागरिकों व गैर नागरिकों को अधिकारों की सुरक्षा का व्यवस्थित प्रयास दिखलाई देता है। अरस्तू ने भी अपनी रचनाओं में तत्कालीन यूनानी समाज के नागरिकों के सद्गुण, न्याय व अधिकारों की चर्चा की है। सिसरों ने प्राकृतिक कानूनों को दार्शनिक आधार प्रदान किया। थॉमस एक्विनास जैसे धार्मिक शाश्वतवादियों ने अपने धार्मिक तर्को को मानवीय सम्मान प्राकृतिक कानून की शाश्वतता पर आधारित किया।

मानव अधिकार शब्द का प्रथमतः प्रयोग अमेरिका के राष्ट्रपति रुजवेल्ट ने सन् 1941ई0 को कांग्रेस को सम्बोधित करते हुए अपने उद्बोधन में किया था। इस उद्बोधन में उन्होंने वाक् स्वतन्त्रता, गरीबी से मुक्ति, भय से स्वतन्त्रता पर अपने विचार प्रस्तुत करते हुए विश्व को इसी अवधारणा पर आधारित होने का प्रस्ताव रखा। विश्व स्तर पर मानवाधिकार की चर्चा एक बार शुरू होने पर उसके द्वारा सामाजिक, प्रशासनिक, वैधानिक, स्थानीय विधानों की सम्भावनाओं को भी तलाशा जाने लगा। मानवाधिकार को ध्यान में रखते हुए ही उसके वैधानिक प्रावधानों को, प्रशासनिक आदेशों को, स्थानीय स्तर पर न्यायिक घोषणाओं को महत्व दिया जाने लगा। इस महत्व का कारण भी कहीं न कहीं मानव जाति का विकास करना ही रहा। मानव सभ्यता का इतिहास निरन्तर उत्थान और पतन के साथ गुजरता हुआ आज की स्थिति में आया है। परिवर्तन का ऐसा ही स्वरूप मानवाधिकारों को लेकर भी दिखाई दिया। पश्चिम से आयातित होकर आये इस शब्द में विशेष रूप से 1215 का मैग्नाकार्टा, 1628 का पैटिशन ऑफ राइट, 1689 का बिल ऑफ राइट्स, 1776 का अमेरिकी घोषणापत्र, 1789 का फ्रांसीसी मानव और अधिकारपत्र आदि को मानवाधिकार के विकास हेतु देखा जा सकता है। देखा जाये तो संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना का उद्देश्य भी मानवाधिकारों की रक्षा और शांति के लिए किया गया था। इसी संयुक्त राष्ट्रसंघ के चार्टर की धारा 68 के तहत सन् 1946 में श्रीमती एलोनोर रुजवेल्ट की अध्यक्षता में एक मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। इस आयोग ने विश्वव्यापी घोषणा के लिए मसौदा 1948 में तैयार कर लिया और महान वैज्ञानिक अल्फ्रैड नोबल के जन्मदिन 10 दिसम्बर सन् 1948 ई0 को मानवाधिकारों को 48 के विरुद्ध शून्य मतों से स्वीकार कर लिया गया। इस स्वीकार्यता के बाद ही 10 दिसम्बर को मानवाधिकार दिवस के रूप में मनाने का संकल्प सभी देशों ने लिया और अपने–अपने संविधान में मानवाधिकारों को आधारभूत उद्देश्य के रूप में स्वीकार किया।

मानव अधिकारों के सम्बन्ध में सर्वाधिक व्यवस्थित विचार में सामाजिक समझौते की परंपरा के दार्शनिकों–हॉब्स, लॉक व रूसों की कृतियों में दिखाई देता है, जिन्होंने व्यक्ति को राज्य के अत्याचारों से बचाने का सबल प्रयास किया। मध्यकाल को आच्छादित करने वाला शासक के दैवी अधिकार का सिद्धान्त पर प्रश्न उठने लगे। सामाजिक समझौते के अन्तर्गत राज्य की सत्ता अब प्राकृतिक अवस्था के मनुष्यों के चरित्र व व्यवहार को नियमित व नियंत्रित करने तक सीमित हो गया। दैवी सिद्धान्त की भाँति अब शासक मनुष्यों के जीवन व कार्यो पर एकाधिकार का दावा नहीं कर सकता था। यद्यपि सामाजिक समझौते परंपरा के तीनों दार्शनिक हॉब्स, लॉक व रूसों प्राकृतिक अवस्था के मनुष्य के स्वभाव के विषय में अलग–अलग विचार रखते हैं, तथापि तीनों ही इस बात पर एकमत है कि राज्य का मूल व अर्न्तनिहित कार्य शासकीय शोषण से व्यक्तियों की रक्षा करना है। तीनों विचारको द्वारा शासक को अलग–अलग मात्रा में शक्ति व सत्ता प्रदान की गयी है।

हॉब्स प्राकृतिक अवस्था की अराजकता से व्यक्तियों की सुरक्षा व संरक्षा हेतु सामाजिक संविदा द्वारा अपने 'लेवियाथान' को सर्वशक्तिशाली बनाना चाहता था। क्योंकि हॉब्स का मानना था कि व्यक्ति स्वभाव से ही स्वार्थी लालची और आक्रमण तथा हिंसक प्रवृत्ति का स्वामी है। व्यक्तियों के सुरक्षा के अधिकार को सुनिश्चित करने के लिए और शासकीय शोषण से उन्हें बचाने हेतु ही राज्य समझौते द्वारा अस्तित्व में आया। नागरिक समाज में व्यक्ति के कुछ अत्याज्य व शाश्वत अधिकार है जिनकी रक्षा करना शासक का मूलभूत दायित्व है। यदि शासक इन अधिकारों की रक्षा करने में सक्षम नहीं है तो उसे अपने पद का त्याग करना होगा। हॉब्स द्वारा व्यक्ति व नागरिक को सर्वशक्तिशाली ' लेवियाथान' के विरूद्ध दिया गया यह एक अमोघ अस्त्र है।

जॉन लॉक का मानवीय स्वभाव का विश्लेषण थॉमस हॉब्स के विश्लेषण से सर्वथा भिन्न है। जॉन लॉक के अनुसार प्राकृतिक अवस्था था मनुष्य स्वभाव से दया, सहानुभूति व परोपकार की भावना से ओत–प्रोत सद्गुणी प्रार्थी था। उसने बतलाया कि जीवन और संपत्ति की सुरक्षा के लिए ही राज्य संविदा द्वारा अस्तित्व में आया। लॉक एक ऐसे शासक की वकालत करता है जो व्यापार व संपत्ति संबंधी विवादों पर एक न्यायाधीश की तरह कार्य कर सके। वास्तव में लॉक एक साथ ही अधिकार संविदा और ईसाइयत न्याय प्रणाली दोनों को लेकर चलने का प्रयास कर रहा था। इसीलिए लॉक के विचार आगामी मानवाधिकार संबंधी चिंतन की आधारशिला बने।

सामाजिक समझौते की चिंतन परंपरा से मानवाधिकार के विकास के संबंध में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचार रूसो ने प्रस्तुत किया। रूसों की मान्यता थी कि छोटे समूहों की जनतांत्रिक सहभागिता द्वारा लोगों की सामान्य इच्छा का प्रकटीकरण हो सकता है। यद्यपि रूसों सामाजिक संविदा की चिंतन परंपरा से जुड़ा है किंतु उसके विचारों को फ्रांस की बौद्धिक परंपरा के संदर्भ में भी देखा जा सकता है। उसके समकालीन विचारकों जैसे माण्टेस्क्यू व बाल्टेयर ने मानवाधिकारों के दर्शन को अपने ढंग से प्रस्तुत किया। माण्टेस्क्यू का शक्ति–पृथक्करण संबंधी सिद्धान्त और वाल्तेयर का सेंसरशिप पर आक्रमण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की माँग मानव अधिकार के दर्शन के विकास में मील का पत्थर सरीखे है।

मानवाधिकार के संदर्भ में समकालीन राजनीतिक चिंतन में सर्वाधिक महत्वपूर्ण विचार जॉन रॉल्स के है। उसका चिंतन के महत्व को शेस्टॉक के इस कथन से भलीभाँति समझा जा सकता है कि ''मानव अधिकार से संबंधित कोई भी घरेलू या अंतर्राष्ट्रीय सिद्धान्त बिना रॉल्स के

सिद्धान्त को ध्यान में रखे आगे नहीं बढ़ाया जा सकता।'' पारंपरिक संविदा सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए रॉल्स ने अपना न्याय संबंधी सिद्धान्त प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया। उसके अनुसार न्याय सामाजिक संस्थाओं का प्रथम सद्गुण है अतः मानव अधिकार को समझने हेतु यह अत्यंत महत्वपूर्ण है। अधिकार और कर्तव्य न्याय के सिद्धान्त पर कार्य कर रही सामाजिक संस्थाओं संनिःसृत होते हैं। रॉल्स के अनुसार न्याय का शाश्वत सिद्धान्त वस्तुतः प्रारंभिक चरण में किये गये स्वच्छ समझौते पर आधारित मानव के विवेकपूर्ण निर्णय की देन है।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर मानवाधिकारों की प्रमुख विशेषताओं को निम्नवत् विश्लेषित किया जा सकता है :

1) सर्वप्रथम मानवाधिकार प्रत्येक मनुष्य का अधिकार है। यह किसी संस्था या राज्य विशेष या समुदाय विशेष का विषय न होकर संपूर्ण मानवीय समाज का विषय है।

2) मानवाधिकार मूलतः नैतिक है अतः उनको लागू करना मानवीय चेतना पर निर्भर होता है। यद्यपि उन्हें राज्यनिर्मित कानूनी अधिकारों व संविधान प्रदत्त मूल अधिकारों का संरक्षण प्राप्त होता है। साथ ही इनमें सभी प्रकार के अधिकार समाहित होते हैं जैसे : सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जिनके द्वारा मनुष्य शांति, सुरक्षा व सम्मान का जीवन व्यतीत कर सके।

3) प्रत्येक मनुष्य महान मानवीय समाज का सदस्य होने के नाते स्वाभाविक रूप से अधिकार रखता है, भले ही वह उसके विषय में जानकारी रखता हो या न रखता हो। ऐसे व्यक्तियों को उनके अधिकारों के विषय में जागरूक किया जाना चाहिए जिससे वे भी सुरक्षा, शांति व सम्मान के साथ जीवन बिता सकें।

4) अन्य अधिकारों की तरह मानव अधिकारों पर भी सार्वजनिक शांति, सुरक्षा, राजनीतिक सुरक्षा, सामाजिक सद्भाव के हित में कुछ प्रतिबंध लगाये जा सकते हैं। प्रत्येक राष्ट्र राज्य इस संदर्भ में अपने अलग–अलग दृष्टिकोण रखते हैं।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के इसी आदर्श को स्वीकार करने के बाद ही संयुक्त राष्ट्रसंघ के मानव अधिकार आयोग को मानव अधिकारों के मूलभूत सिद्धान्तों का मसविदा तैयार करने का कार्य सौंपा गया। लगभग तीन वर्षों के प्रयासों के बाद आयोग ने मानव अधिकारों की सार्वजनिक घोषणा का मसौदा तैयार किया, जिसे 10 दिसम्बर 1948 ई0 को स्वीकार किया गया। इस घोषणापत्र में 30 अनुच्छेद हैं जिनमें मानव से सम्बन्धित विविध अधिकारों का उल्लेख किया गया है। इसकी प्रस्तावना में मानव जाति की जन्मजाति गरिमा और सम्मान तथा अधिकारों पर बल दिया गया। 30 अनुच्छेदों वाले संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणापत्र को निम्न रूप में संक्षेप में समझा जा सकता है।

अनुच्छेद 1) सभी मानव जन्म से स्वतन्त्र हैं तथा वे अपने अधिकार और मर्यादा में भी समान हैं। उनमें विवेक, बुद्धि है अतएव एक दूसरे के प्रति भ्रातृत्व का भाव रखना चाहिए।

अनुच्छेद 2) प्रत्येक व्यक्ति बिना जाति, धर्म, रंग, लिंग, राजनीतिक, सामाजिक उत्पत्ति, जन्म अथवा किसी दूसरे प्रकार के भेदभाव के इस घोषणा में उल्लेखित सभी अधिकारों और स्वतन्त्रता का पात्र है। इसके अतिरिक्त किसी देश अथवा स्थान के साथ, जिसका कि वह व्यक्ति नागरिक है, राजनीतिक परिस्थिति के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा, चाहे वह स्वतन्त्र हो, संरक्षित हो, स्वशासनाधिकार से विहीन हो अथवा अन्य किसी प्रकार से अल्पप्रभुता सम्पन्न हो।

अनुच्छेद 3) प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वाधीनता और सुरक्षा का अधिकार है।

अनुच्छेद 4) किसी भी व्यक्ति को गुलामी, दासता में नहीं रखा जायेगा। दासता और दास व्यवहार सभी क्षेत्रों में सर्वथा निषिद्ध है।

अनुच्छेद 5) किसी व्यक्ति को क्रूर एवं अमानवीय दण्ड नहीं दिया जायेगा और न ही उसके साथ अपमानजनक बर्ताव किया जायेगा।

अनुच्छेद 6) प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार होगा कि उसे सर्वत्र कानून के अधीन व्यक्ति माना जाये।

अनुच्छेद 7) कानून की दृष्टि में सभी व्यक्ति समान हैं और बिना किसी भेदभाव के कानून की सुरक्षा के अधिकारी हैं।

अनुच्छेद 8) प्रत्येक व्यक्ति को संविधान अथवा कानून द्वारा प्राप्त मौलिक अधिकारों को भंग करने वाले कार्यों के विपरीत राष्ट्रीय न्यायालयों के समक्ष संरक्षण पाने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 9) किसी भी व्यक्ति की अविहित गिरफ्तारी, कैद अथवा उसका निष्कासन नहीं किया जा सकेगा।

अनुच्छेद 10) प्रत्येक व्यक्ति को स्वतन्त्र और निष्पक्ष न्यायालय द्वारा अपने अधिकारों और कर्तव्यों के तथा अपने विरुद्ध आरोपित किसी अपराध के निर्णय के लिए उचित और खुलेआम रूप से सुने जाने का पूर्णरूप से समान अधिकार है।

अनुच्छेद 11) प्रत्येक उस व्यक्ति को जिस पर दण्डनीय अपराध का आरोप है तब तक उसे अपराधी सिद्ध नहीं किया जा सकता है जब तककि उसे अपने को निर्दोष प्रामणित करने की सुविधा रही हो। जो अपराध, अपराध करने के समय किसी राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार दण्डनीय नहीं था, उस अपराध के लिए अपराध के बाद बने कानून द्वारा किसी व्यक्ति को दण्डित नहीं किया जा सकता है।

अनुच्छेद 12) किसी कौटुम्बिक, गृाहस्थिक और पत्र–व्यवहार की गोपनीयता में मनमाना दखल नहीं दिया जा सकता है तथा न ही उसके सम्मान और ख्याति को आघात पहुँचाया जायेगा।

अनुच्छेद 13) प्रत्येक व्यक्ति को अपने राज्य की सीमा के भीतर आवागमन करने, निवास करने की सुविधा की स्वतन्त्रता प्राप्त होगी। साथ ही व्यक्ति को किसी भी देश को जिसमें उसका देश भी शामिल है, उस देश को छोड़ने और अपने देश में लौटने का अधिकार है।

अनुच्छेद 14) प्रत्येक व्यक्ति को प्रताड़ना से बचने के लिए किसी भी देश में आश्रय लेने और सुख से रहने का अधिकार है। अराजनैतिक अपराध, संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के विरुद्ध कार्यों के फलस्वरूप दण्डित व्यक्ति अधिकार से वंचित होंगे।

अनुच्छेद 15) प्रत्येक व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार है। किसी को उसकी राष्ट्रीयता से मनमाने ढंग से वंचित नहीं किया जा सकता है और उसको न ही राष्ट्रीयता परिवर्तन करने के मान्य अधिकार से ही वंचित किया जायेगा।

अनुच्छेद 16) वयस्क अवस्था वाले स्त्री–पुरुष को जाति, राष्ट्रीयता, धर्म की सीमा के बिना विवाह करने और परिवार स्थापित करने का अधिकार है। उन्हें विवाह करने, वैवाहिक जीवन व्यतीत करने और वैवाहिक सम्बन्ध–विच्छेद करने का समान अधिकार है। विवाह के इच्छुक दम्पत्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता और स्वीकृति पर ही विवाह सम्पन्न होगा। परिवार को समाज की नैसर्गिक एवं मौलिक सामूहिक इकाई समझा जायेगा और उसे समाज और राज्य द्वारा संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 17) प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं अथवा दूसरे के साथ सम्पत्ति रखने का अधिकार होगा। किसी

को भी मनमाने ढंग से अपनी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद 18) प्रत्येक व्यक्ति को विचार, अनुभूति, धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार प्राप्त है। इस अधिकार से उसे अपने मत और विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता के साथ–साथ धर्म और मत का उपदेश, प्रयोग और परिपालन सर्वधारण के सामने अथवा एकान्त में करने की स्वतन्त्रता विहित है।

अनुच्छेद 19) प्रत्येक व्यक्ति को मत और विचार व्यक्त करने की स्वतन्त्रता है। इसके अन्तर्गत वह स्वेच्छा से मत स्थिर करने और किसी भी भौगोलिक सीमा और माध्यम से विचार और सूचना माँगने, प्राप्त करने और देने की स्वतन्त्रता निहित है।

अनुच्छेद 20) प्रत्येक व्यक्ति को शान्तिपूर्ण ढंग से एकत्रित होने और सभा करने की स्वतन्त्रता है। इसके साथ ही किसी भी व्यक्ति को किसी भी संस्था में सम्मिलित होने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है।

अनुच्छेद 21) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश के प्रशासन में स्वतन्त्रतापूर्वक निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा भाग लेने का अधिकार होगा। इसके साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश में सरकारी सेवा में पहुँचने की सुविधा का समान रूप से अधिकार प्राप्त होगा।

अनुच्छेद 22) प्रत्येक व्यक्ति समाज का सदस्य होने के नाते सामाजिक सुरक्षा का अधिकार रखता है और राष्ट्रीय प्रयत्न और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के द्वारा एवं प्रत्येक राज्य के संगठन, साधन के अनुसार आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अधिकारों को जो उसके गौरव एवं व्यक्तित्व के स्वतन्त्र विकास के लिए आवश्यक हों, को प्राप्त करने का अधिकार रखता है।

अनुच्छेद 23) प्रत्येक व्यक्ति को काम करने, जीविका के लिए पेशा चुनने, काम की उचित एवं अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त करने तथा बेकारी से सुरक्षित रहने का अधिकार है। इसमें यह भी व्यवस्था है कि व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के समान काम के लिए समान वेतन पाने का अधिकार है।

अनुच्छेद 24) प्रत्येक व्यक्ति को विराम और अवकाश पाने का अधिकार है, इसके साथ ही काम के घण्टों का समुचित निर्धारण तथा अवधि के अनुसार सवेतन अवकाश पाने का भी अधिकार है।

अनुच्छेद 25) प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा जीवन स्तर पाने का अधिकार है जिसमें उसको और उसके परिवार को पर्याप्त स्वास्थ्य एवं सुख सुविधा प्राप्त हो। इसमें भोजन, वस्त्र, निवास स्थान, चिकित्सा की सुविधा आदि सम्मिलित है।

अनुच्छेद 26) इसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है, इसमें कम से कम मौलिक स्तर और प्रारम्भिक अवस्था तक शिक्षा निःशुल्क होगी। माता–पिता को अपनी संतान के लिए शिक्षा का प्रकार चुनने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 27) प्रत्येक व्यक्ति को समाज में सांस्कृतिक जीवन में स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लेने, कलाओं का आनन्द लेने और वैधानिक विकास से लाभान्वित होने का अधिकार है।

अनुच्छेद 28) प्रत्येक व्यक्ति ऐसी सामाजिक और अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था का अधिकारी है जिससे इस घोषणा में निर्दिष्ट अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की पूर्ण प्राप्ति हो सके।

अनुच्छेद 29) प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे कर्तव्यों की पूर्ति भी एक कानून व्यवस्था के अन्तर्गत रहते हुए करने का अधिकार है जिसमें वह व्यक्ति अपने अधिकारों और स्वतन्त्रता का उपयोग एक सीमा के भीतर ही रह कर करेगा। इसमें यह भी ध्यान रखना होगा कि दूसरों के अधिकारों, स्वतन्त्रता

का अपेक्षित सम्मान एवं प्रतिष्ठा हो सके। इन अधिकारों का किसी भी दशा में संयुक्त राष्ट्रसंघ के उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के विरुद्ध किसी भी दशा में प्रयोग न किया जाये।

अनुच्छेद 30) इस घोषणापत्र में दिये गये किसी भी आदेश के ऐसे अर्थ न निकाले जायें जिससे किसी राज्य को समूह अथवा किसी व्यक्ति को किसी काम में लगाने या करने का आधार मिले जिसका इस घोषणापत्र में वर्णित अधिकारों और स्वतन्त्रता में से किसी को नष्ट करने का उद्देश्य हो।

संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा घोषित इस घोषणापत्र को मानवता का दमकल कह कर पुकारा गया। देखा जाये तो यह किसी प्रकार का कानूनी दस्तावेज न होकर एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेज है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के इस दस्तावेज को भले ही मान्यता सभी देशों ने मिलकर एक व्यापक उद्देश्य के लिए दी हो किन्तु भारतीय संविधान में पहले से ही किसी न किसी रूप में मौलिक अधिकारों के स्वरूप में मानव अधिकारों की चर्चा की गई थी। भारतीय संविधान में वर्णित मौलिक अधिकारों में मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में उल्लिखित 30 में से लगभग 15 में मानव अधिकार समाहित हैं। भारतीय संविधान भारत के परिप्रेक्ष्य में राष्ट्र और समाज की दिशा को निर्धारित करने वाले तत्व संस्कृति, सभ्यता, परम्परा तथा संविधान है। यह और भी उल्लेखनीय तत्व है कि भारतीय संविधान में कहीं भी मानवाधिकार शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। संविधान केवल मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्यों की बात करता है। संसद में मानवाधिकार शब्द का प्रथमतः उपयोग सन् 1983 ई0 में किया गया। भारत में मानव अधिकार आयोग विधेयक लोकसभा में 14 मई 1992 ई0 को प्रस्तुत किया गया। इससे पूर्व भारत ने महासभा की तृतीय बैठक के समक्ष मानव अधिकारों की अभिवृद्धि एवं संरक्षण हेतु एक राष्ट्रीय संस्था को गठित किया। भारत ने संयुक्त राष्ट्रसंघ महासचिव से विभिन्न प्रकार की राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्य करने के सम्बन्ध में तथा मानव अधिकार की लिखतों को क्रियान्वित करने के प्रति उनके योगदान की रिपोर्ट दो वर्षों तक महासभा को भेजी। इसके बाद 27 सितम्बर 1993 ई0 को भारत के राष्ट्रपति ने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के गठन को अध्यादेश जारी किया। जिस पर 8 जनवरी 1994 ई0 को एक अधिनियम बनाया गया जिसे मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 के नाम से जाना गया। इस सम्बन्ध में मानवाधिकार की एक सर्वमान्य परिभाषा भी प्रस्तुत की गई। इस परिभाषा के अनुसार मानवाधिकार से तात्पर्य व्यक्ति के ऐसे अधिकारों से है जो जीवन, स्वतन्त्रता, समता एवं महत्ता से सम्बन्धित हैं और संविधान द्वारा अथवा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसविदा द्वारा प्रत्याभूत किये गये हैं तथा भारतीय न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय हैं। इस परिभाषा के आलोक में वर्णित मानवाधिकारों को निम्न आयाम में देखा जा सकता है।

1) यह व्यक्ति के जीवन, स्वतन्त्रता, समता, गरिमा से सम्बन्धित है।
2) यह अधिकार भारतीय संविधान द्वारा प्रत्याभूत किये गये हैं।
3) यह अधिकार अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं द्वारा प्रत्याभूत किये गये हैं।
4) यह अधिकार भारतीय न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय हैं।

इन अधिकारों को सीधे तौर पर हम भारतीय संविधान के भाग–3 में वर्णित मौलिक अधिकारों के रूप में देख सकते हैं। संविधान के इस भाग में उल्लिखित मूल अधिकारों को मानवाधिकारों के रूप में निम्न प्रकार से श्रेणीबद्ध किया जा सकता है।

1) समता का अधिकार ।
2) स्वतन्त्रता का अधिकार ।
3) अपराधों के लिए दोषसिद्धि के विरुद्ध अधिकार ।
4) प्राण और दैहिक स्वतन्त्रता का अधिकार ।
5) गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण का अधिकार ।
6) शोषण के विरुद्ध अधिकार ।
7) संवैधानिक उपचारों का अधिकार ।

इनके अलावा भी भारतीय संविधान में मानवाधिकार का एक अन्य प्रकार का वर्गीकरण है जिसमें कुछ अन्य प्रकार के अधिकारों का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है। इन कतिपय अधिकारों को निम्न रूप में देख जा सकता है।

1) विदेशी यात्रा का अधिकार ।
2) गुणवत्ता का अधिकार ।
3) बेड़ियों के विरुद्ध अधिकार (मानव गरिमा का अधिकार)
4) आपराधिक परीक्षण में निःशुल्क विधिक सहायता का अधिकार।
5) शीघ्र परीक्षण का अधिकार ।
6) हथकड़ी के विरुद्ध अधिकार ।
7) हिरासत में होने वाली हिंसा के विरुद्ध अधिकार।
8) स्वास्थ्य की देखभाल अथवा डॉक्टर की सहायता का अधिकार ।
9) 14 वर्ष के बच्चों को निःशुल्क शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार ।
10) प्रेस की स्वतन्त्रता का अधिकार।
11) प्रतिकार प्राप्त करने का अधिकार।

उपरोक्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत में मानवाधिकार से सम्बन्धित आयोग का गठन 1993 में भले ही हुआ हो किन्तु मानव अधिकारों के प्रति भारतीय संविधान पहले से ही जागरूकता की स्थिति में रहा है।

मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम 1993 मुख्यतः राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग तथा राज्य मानवाधिकार आयोग की उपयोगिता को परिभाषित करता है। आयोग की उपयोगिता का आकलन उसके कार्य करने और उसमें निहित शक्तियों के आधार पर किया जाता है। इस अधिनियम की धारा 12 में आयोग के कार्यों का स्पष्ट वर्णन किया गया है।

1) स्वप्रेरणा से अथवा पीड़ित व्यक्ति द्वारा अथवा उसकी ओर से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा याचिका प्रस्तुत करने पर।
2) किसी न्यायालय के समक्ष लम्बित मानवाधिकार के उल्लंघन के किसी आरोप से सम्बन्धित कार्यवाही में उस न्यायालय के अनुमोदन से हस्तक्षेप करना।
3) राज्य सरकार को सूचित करते हुए अन्तःवासियों की जीवनदशा का अध्ययन करने हेतु राज्य सरकार नियंत्रणाधीन किसी ऐसी जेल अथवा संस्था जिसमें व्यक्तियों को चिकित्सा, सुधार अथवा संरक्षण के प्रयोजनार्थ निरुद्ध किया जाता है अथवा रखा जाता है, का निरीक्षण करना और उसके बारे में सुझाव देना।
4) संविधान तथा तत्समय प्रचलित किसी अन्य विधि में मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु उपबन्धित संरक्षण के उपायों की समीक्षा करना तथा उनके प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सुझाव देना।
5) मानवाधिकार के उपभोग को अवरुद्ध करने वाले आतंकी कार्यों की समीक्षा करके उनके उपचार हेतु समुचित सुझाव देना।

6) मानवाधिकार से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय संधियों का अध्ययन करना तथा उनके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु सुझाव देना।

7) मानव अधिकार से सम्बन्धित क्षेत्र में शोध करना तथा शोध कार्यों को बढ़ावा देना।

8) समाज के विभिन्न वर्गों में मानवाधिकार से सम्बन्धित चेतना का विकास करने हेतु सेमीनार, के माध्यम से, प्रकाशन के माध्यम से, मीडिया के माध्यम से उपलब्ध उपायों के प्रति जागरूकता लाना।

9) मानवाधिकार के क्षेत्र में कार्य करने वाले गैर सरकारी संगठनों तथा संस्थाओं के कार्यों को प्रोत्साहित करना।

इन कार्यों के अतिरिक्त इस अधिनियम की धारा 13 में भी मानवाधिकार आयोग को किसी भी प्रकरण में जाँच करने का अधिकार प्रदान किया गया है। इस अधिकार के अन्तर्गत

1) परिवादों की जाँच करते समय आयोग को वे सारी शक्तियाँ प्राप्त होगीं जो किसी सिविल न्यायालय को सिविल प्रक्रिया 1908 के अन्तर्गत किसी वाद के विचारण में प्राप्त होतीं हैं।

2) आयोग को यह भी शक्ति है कि वह किसी भी व्यक्ति, किसी भी प्राधिकार जो तत्समय प्रचलित किसी भी विधि के अधीन दावा करता है, के अधीन रहते हुए, से सारी बातों अथवा मामलों के बारे में सूचना माँग सकता है।

इस क्रम के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आयोग के कार्यों को देखकर एक सवाल मन में उठता स्वाभाविक है कि क्या आयोग को किसी प्रकरण में यदि दोषी के बारे में पता है तो क्या वह स्वयं कार्यवाही करने के लिए स्वतन्त्र नहीं है? इस सवाल का सीधा सा जवाब है नहीं, आयोग किसी भी ज्ञात दोषी के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकता है वरन् उसके सम्बन्ध में सरकार को अथवा सम्बन्धित विभाग को मात्र संस्तुति कर सकता है। किसी भी दोषी के खिलाफ कार्यवाही करने का आयोग को अधिकार नहीं होता है। मानवाधिकार के देश भर में सफलतम कार्य संचालन की दृष्टि से इसको विविध स्वरूपों में विभक्त कर इसको प्रभावी बनाने का प्रयास किया गया है। इसमें विभिन्न स्वरूपों के द्वारा मानवाधिकार से सम्बन्धित मामलों की निष्पक्ष जाँच कर उनका अतिशीघ्र निस्तारण करने का प्रावधान किया गया है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मानवाधिकार रणनीति नहीं, व्यवस्था का विषय है। यह मानवतावाद की सर्वोत्तम अभिव्यक्तित्व व उत्कृष्ट व्यावहारिकता है। मानवाधिकार की संकल्पना अत्यधिक व्यापक है। इसलिए मानवता के समक्ष जो भी समस्याएँ उपस्थित हैं उन सभी का समाधान करना ही इस संकल्पना का लक्ष्य है। इस प्रकार अब किसी भी पढ़े–लिखे संवेदनशील मनुष्य के लिए मानवाधिकारों की सार्वभौमिकता को नकारना असम्भव हो चुका है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा पारित मानवाधिकारों का घोषणापत्र कोई मौलिक या नई पहल नही कर रहा है बल्कि जमीनी हकीकत को स्वीकार कर रहा है। संयुक्त राष्ट्र इस बात के लिए भी प्रयत्नशील रहा है कि वह महिलाओं, बच्चों, विकलांगों और आदिवासियों आदि दुर्बल तबकों के मानवीय अधिकारों की हिफाजत कर सके। विकास के नाम पर मानवाधिकारों का हनन नहीं किया जाना चाहिये। सूचना संचार द्वारा लोगों में जागरूकता लाकर मानवाधिकार के पहलू को सशक्त बनाया जा सकता है। न्यायिक सक्रियता ने भी मानवाधिकारों को संबल प्रदान किया है। अंततः मानवाधिकारों के हनन के सहिष्णुता की संस्कृति व कानून का परिपालन करने की सजगता द्वारा ही रोका जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. अंसारी, एम0ए0(2003) 'महिला और मानवाधिकार' ज्योति प्रकाशन, 187 बरकत नगर, टोंक फाटक, जयपुर।
2. सुब्रहमण्यम, एस0 (2007) 'पुलिस और मानवाधिकार' प्रभात प्रकाशन 4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली
3. सिंह, मंगला (2008) ' पर्यावरण अध्ययन' मिश्रा ट्रेंडिंग कारपोरेशन, मैदागिन, वाराणसी।
4. त्रिपाठी, डी0पी0 'मानवाधिकार' इलाहाबाद लॉ एजेंसी पब्लिकेशन, इलाहाबाद,1990
5. उपाध्याय, जयराम, 'मानवाधिकार' सेन्ट्रल लॉ एजेंसी, इलाहाबाद,1992
6. श्रीवास्तव सुधा रानी 'मानवाधिकार' मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल,2009
7. आलम ऑफताब, ''ह्यूमन राइट्स इन इंडिया : इशूज एण्ड चैलेन्जेज'' राज पब्लिकेशन्स, दिल्ली,2002
8. ब्रायन, डारेन जे0ओ0, ''ह्यूमन राइट्स : एन इण्ट्रोडक्शन'' पर्शन एजूकेशन लि0, दिल्ली, 2000
9. प्रभा, के0 : ''टेररिज्म एण्ड वायलेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स'' बी0एस0वाघमारे कृत, ''ह्यूमन राइट्स : प्राब्लम्स एण्ड स्पेक्ट्रस'' 2000
10. शेस्टॉक, जेरोम, जे0 ''द फिलासफिकल फाण्डेशन्स ऑफ ह्यूमन राइट्स '' जॉनस्यूज सिमान्डीज सम्पादित, ''ह्यूमन राइट्स : कान्सेटट्स एण्ड स्टैण्डड्र्स'' रावत पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली,2001

   मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948

Copyright © 2018, Vishakha. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.